उत्तर प्रदेश राज्य

बनाम

कुंवर श्री त्रिविक्रम नारायण सिंह

(पी. बी. गजेन्द्रगढकर, के. सुब्बा राव,

एम. हिदायतुल्ला, जे. सी. शाह और

रघुबर दयाल, जे. जे.)

जमींदारी उन्मूलन -तहसीलदारी अधिकारों और मालिकाना अधिकारों के नुकसान के मुआवजे के बदले में पेंशन का भुगतान -यदि भूमि में हित निहित हो - यू०पी० भू-राजस्व अधिनियम, 1901 (1901 का उ०प्र० 3), धारा 32, उपखण्ड (ए) से (डी) - यू.पी. जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम, 1950 (1951 का यू.पी० 1), धाराएं 3(8), 4, 63 (बी)।

तत्कालीन सरकार के आदेश से प्रतिवादी के पूर्वज एस का सम्पूर्ण परगना "स्यूदपोर भैट्री" पर अधिकार फिर से शुरु कर दिया गया। एस ने जागीर में अपना हित फिर से शुरु करने के सरकार के अधिकार को दीवानी न्यायालय में चुनौती दी। विवाद के लंबित रहने के दौरान निपटान की कार्यवाही शुरु की गई और 1832 में निपटान अधिकारी ने बताया कि "स्यूदपोर भैट्री" परगना के 166 महलों पर, गांव के जमींदारों ने अपना

मालिकाना अधिकार स्थापित कर लिया था और केवल 12 महलों पर एस का मालिकाना अधिकार स्थापित हो चुका था। दीवानी न्यायालय में लंबित विवाद में समझौता हो गया और 1838 में एस के बेटे एच (जिसकी इस बीच मृत्यु हो गई) के साथ शर्तों को अंतिम रुप दिया गया। शर्तें, अन्य शर्तों के अलावा, उन 166 महलों के लिए थी जो जमींदारी एच एवं उसके उत्तराधिकारियों के साथ समझौता हुआ था तहसीलदारी शुल्क काटने के बाद संग्रह का 1/4 वां हिस्सा पेंशन का भुगतान वार्षिक रुप से किया जाएगा एवं जिन 12 महलों का निपटारा एच के साथ हुआ उनका भत्ता आंकलन किए गए राजस्व के चौथाई हिस्से के रुप में किया जाएगा। समझौते के तहत सरकार का इरादा परगना के शुद्घ राजस्व का एक स्पष्ट चौथाई हिस्सा पेंशन के रुप में देने का था। 1838 से एच और उसके वंशजों को भत्ता और / या पेंशन का भुगतान कोषागार कार्यालय के माध्यम से साल दर साल किया गया।

1951 में यू०पी० विधानमण्डल ने 1951 का उत्तरप्रदेश जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार अधिनियम 1 अधिनियमित किया और अधिनियम की धारा 6(बी) के तहत राजस्व अधिकारियों ने प्रतिवादी को भत्ते का भुगतान रोक दिया। प्रतिवादी ने दावा किया कि अधिनियम की धारा 4 के तहत जारी अधिसूचना के आधार पर उसका पेंशन प्राप्त करने

का अधिकार समाप्त नहीं हुआ क्योंकि अधिनियम में दी गई परिभाषा के अनुसार पेंशन अधिनियम के अर्थ के तहत न तो भूमि थी, न अचल सम्पत्ति थी और न ही राजकीय भूमि थी और यह केवल "स्यूदपोर भैट्री" परगना में स्थित राजकीय सम्पत्ति पर उसके पूर्वजा◌ं के अधिकारों के बदले में देय मुआवजा था, यह राज्य सरकार में निहित होने योग्य नहीं था।

अभिनिर्धारित, व्यवस्था के तहत सरकार से 166 महलों के लिए 30,612-8.0 रुपए का भत्ता प्राप्त करने का अधिकारी भूमि या उसके राजस्व के संबंध में नहीं था, इसे उस भूमि से संबंधित एक दीवानी न्यायालय में दायर दावे के निपटारे के लिए विचार के रुप में प्रदान किया गया था और इस आशय के स्पष्ट प्रावधान के अभाव में इसे यू०पी० भू-राजस्व अधिनियम की धारा 32 के खण्ड (ए) से (डी) में वर्णित वह क्षेत्र जो रजिस्टर में दर्ज एक प्रविष्टि में शामिल था

विधानमण्डल का आशय सम्पदा और सम्पदा में सभी व्युत्पन्न अधिकारों को खत्म करना और राज्य और मिट्टी जोतने वाले के बीच मध्यस्थों के हितों को खत्म करना था। स्वामित्व की पुष्टि प्रदत्त करना जो किसी सम्पत्ति या उसके राजस्व में भूमि के अधिकारों या विशेषाधिकार के संबंध में है, इसे अधिनियम की धारा 6 के उपखण्ड (बी) के तहत निर्धारित

करना चाहिए, परन्तु भू-राजस्व या भूमि पर अधिकार सम्पत्ति के बदले भत्ता प्राप्त करने के अधिकार को उपखण्ड (बी) के प्रभाव से सुनिश्चित नहीं किया जा सकता। भत्ते में भूमि या भू-राजस्व के गुण नहीं है, इसकी मात्रा को केवल भूमि के एक हिस्से के शुद्घ राजस्व में चौथे हिस्से के बराबर करके मापा गया था जो कि मुकदमें का विषय था जिसमें भत्ते के भुगतान की व्यवस्था की गई थी। "भूमि या भू-राजस्व के अधिकार के विलुप्त होने के विचार में राज्य से भत्ता प्राप्त करने वाला व्यक्ति भू-राजस्व का स्वामी नहीं है," और विशेष रुप से यदि उसका नाम यू०पी० भू-राजस्व अधिनियम की धारा 32 के उपखण्ड (ए) से (डी) के अंतर्गत राजस्व रिकार्ड में दर्ज नहीं है। यदि उसके सकल एवं शुद्घ सम्पत्ति की गणना संबंधी प्रावधान उस पर लागू नहीं होंगे। अधिनियम का आशय उस भत्ते को प्राप्त करने संबंधी अधिकार को समाप्त करने का नहीं है जो 1951 के अधिनियम 1 की धारा 6(बी) के अनुसार भूमि या भू-राजस्व पर अधिकार को समाप्त करने की ऐवज में दिया गया था।

अभिनिर्धारित, यह माना गया कि प्रतिवादी "स्यूदपोर भैट्री" परगना के 12 महलों का मालिक था। उक्त 12 महल अधिनियम की धारा 3(8) और धारा 4 के तहत एक "सम्पदा" थी। उस सम्पत्ति में प्रतिवादी का अधिकार राज्य में निहित और स्थानांतरित हाे गया। 12 महलों में

प्रतिवादी का अधिकार समाप्त हो जाने के कारण, माफी का अधिकार उसकी राशि प्राप्त करने के सकारात्मक अधिकार में परिवर्तित नहीं किया जा सका।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील सं० 529/1958

इलाहाबाद उच्च न्यायालय के द्वारा दीवानी विविध रिट सं० 464/1954 में पारित निर्णय एवं डिक्री दिनांक 9 मार्च, 1956 से उत्पन्न अपील

सी०बी० अग्रवाल, के०बी० अस्थाना और सी०पी० लाल वास्ते अपीलार्थीगण

एम०सी० सीतलवाड, भारत के महाधिवक्ता, ए०बी० विश्वनाथ और एस०पी० वर्मा वास्ते प्रत्यर्थीगण

22 अगस्त, 1961, न्यायालय का निर्णय निम्न के द्वारा दिया गया

शाह, जे० -ईस्ट इंडिया कंपनी और नबाव आसफुद्दौला के बीच एक संधि के तहत, बनारस प्रांत को वर्ष 1775 के आसपास ईस्ट इंडिया कंपनी को सौंप दिया गया था। कंपनी ने तब बनारस के पूर्व शासक राजा चेत सिंह को एक सनद दी और उस सनद के तहत, राजा चेत सिंह के पास पहले से मौजूद अधिकार और शक्तियांं नए सिरे से प्रदान की गईं। राजा चेत सिंह ने अपने दीवान औसन सिंह को उनके परिवार को प्रदान की गई

सेवाओं के पारिश्रमिक के रुप में जागीर, परगना "स्यूदपोर भैट्री" हमेशा के लिए दे दी। राजा चेत सिंह ने अपनी गद्दी त्याग दी, ईस्ट इंडिया कंपनी ने औसन सिह के पक्ष में राजा द्वारा दिए गए अनुदान की पुष्टि की। राजा चेत सिंह के उत्तराधिकारी राजा महीप नारायण सिंह थे, जिन्होंने अनुदान की पुष्टि करते हुए औसन सिंह के पक्ष में एक सनद निष्पादित की।

वर्ष 1789-90 के आसपास बनारस प्रांत में भू-राजस्व बंदोबस्त किए गए थे, लेकिन "स्यूदपोर भैट्री" सहित जागीरों को उस बंदोबस्त से बाहर रखा गया था। औसन सिंह की मृत्यु वर्ष 1800 के आसपास हुई और उनके पुत्र श्योनारायण सिंह जागीर के उत्तराधिकारी बने। 1819 के विनियम II के तहत जागीरदार द्वारा किए गए मालिकाना अधिकार के दावे की गाजीपुर के कलक्टर द्वारा की गई जांच में यह घोषित किया गया कि औसन सिंह को दिया गया अनुदान केवल जीवन भर के लिए था और इससे कोई पैतृक या अन्तरणयोग्य लाभ नहीं मिलता। बिहार एवं बनारस के आयुक्त के द्वारा इस अनुशंषा के अधीन जिलाधीश के निर्णय की पुष्टि की गई कि श्योनारायण सिंह के जीवनकाल तक परगना पर कब्जा बनाये रखा जाना चाहिए। तब सरकार ने 1828 में निर्देश दिया कि गांव के जमींदारों के साथ एक विस्तृत समझौता किया जाए और श्योनारायण सिंह को परगना

पर किए गए मूल्यांकन के आधार पर राजस्व का आधा हिस्सा श्योनारायण सिंह को उसके जीवनकाल तक प्रस्तावित किया जाए। श्योनारायण सिंह ने इस प्रस्ताव को स्वीकार करने से इनकार कर दिया और जागीर को पुनः अस्तित्व में लाने वाले आदेश को चुनौती देते हुए दीवानी न्यायालय में कार्यवाई शुरू कर दी। सरकार ने इस प्रश्न पर नए सिरे से विचार किया और बहाली के आदेश को संशोधित करने का संकल्प लिया और जुलाई 1830 में, आदेश दिया कि श्योनारायण सिंह को परगना "स्यूदपोर भैट्री" का तहसीलदार माना जाएगा, और यह कि कार्यालय जागीरदार के संरक्षकों पर वंशानुगत हस्तांतरण के रूप में माना जाता है और तब तक आयोजित किया जाता है जब तक कि समझौते के गठन के समय अन्य वर्गों से संबंधित विशेषाधिकारों का उल्लंघन नहीं होता है। सरकार के समाधान के बारे में उन्हें सूचित किए जाने से पहले ही श्योनारायण सिंह की मृत्यु हो गई और उनके बाद उनके बेटे हरनारायण सिंह ने मुकदमा वापस ले लिया और प्रस्ताव की शर्तों को शामिल करते हुए एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए।

19 अगस्त, 1831 को सरकार के सचिव ने बनारस स्थित गवर्नर जनरल के प्रतिनिधि को एक निवेदन पत्र पेंशन विभाग के गर्वनर जनरल के सचिव को देते हुए यह सनद जारी किए जाने से संबंधित आवश्यक

दस्तावेज तैयार किए जाएं, जिसमें यह वर्णित किया जाये कि "स्यूदपोर भैट्री" परगना "इस्तमरार" अवधि तक हरनारायण सिंह एवं सम्पत्ति के उसके उत्तराधिकारियों को इस शर्त पर दिया जाये कि वे सरकार को जमा के 3/4 हिस्से का भुगतान करना, जिसका राजस्व अधिकारी परगना के पुनर्वास में आंकलन कर सकते हैं, और कि उक्त परगना में स्थित किसी भी गांव या गांवों के स्वामित्व संबंधी अधिकारी की पूरी जांच की जाएगी और सरकार के संतोषप्रद यदि ऐसा कोई दावा स्थापित होता है तब गांव या गांवों को अनुदान से स्वतंत्र अलग माना जाएगा और कि अन्य मामलों की भांति स्वामियों से एक समझाैता करा जाएगा कि तहसीलदार कार्यालय हरनारायण सिंह से संबंधित होगा जब तक उस पद के कर्तव्यों के लिए निर्धारित शर्तों का उल्लंघन नहीं किया जाता है, और इस तरह के पद के आधार पर, उसके परिवार में अलग प्रोप्राइटर जमा का भुगतान करना जारी रखेंगे जिसका मूल्यांकन उनके गांवों में हरनारायण सिंह या परिवार के ऐसे अन्य सदस्य के माध्यम से किया जा सकता है जिसे सरकार नियुक्त कर सकती है, बशर्ते कि ऐसे अलग किए गए गांवों की 1/4 जमा तहसीलदार के कर्तव्यों के निर्वहन के लिए सभी पारिश्रमिक के बदले सरकार को किए जाने वाले भुगतान से काट ली जाएगी और आगे प्रावधान किया गया कि जब तक समझौता पूरा नहीं हो जाता, हरनारायण सिंह सरकार को जमा का भुगतान करना जारी रखेंगे। हरनारायण सिंह का इस

प्रस्ताव के लिए आव्हान कि वह सभी प्रशासनिक व संग्रह में हाेने वाले नुकसान को वहन करेगा, जो समझौते की शर्तों के विपरीत है। हरनारायण सिंह ने उस पत्र में निर्धारित शर्तों पर सनद और तहसीलदार के कार्यालय की पेशकश को स्वीकार करने से इंकार कर दिया। इस बीच, निपटान के लिए कार्यवाही शुरु की गई और 16 नवम्बर 1832 को निपटान अधिकारी ने परगना के संक्षिप्त निपटान के निष्कर्ष पर रिपोर्ट दी कि 166 महलों में, गांव के जमींदारों ने मालिकाना अधिकार स्थापित किए और उन पर राजस्व का 1,28,960/- रुपए आंकलन किया गया। यह भी रिपोर्ट किया गया कि 12 महलों, जिनका सकल राजस्व 22,840/- रुपए था को जागीरदारों के साथ 17,130/- रुपए के कम राजस्व समझौता किया गया।

राज्य सरकार की शर्तों पर तहसीलदार के कार्यालय को लेने से हरनारायण सिंह ने इंकार कर दिया, राजस्व मण्डल ने सुझाव दिया कि हरनारायण सिंह सकल संग्रह में से तहसील स्थापना के खर्चे को काटते हुए कुल संग्रह का 1/4 हिस्सा प्राप्त करगा जिससे 36,322-8.0 रुपए की आय मिलेगी। राजस्व मण्डल ने यह अनुशंषा की कि लेफ्टिनेंट गवर्नर की अधिकारिता के अंतर्गत एक सनद यह अधिकार देते हुए कि हरनारायण सिंह व उसके उत्तराधिकारियों को 36,322-8.0 रुपए की पेंशन" प्रदान की जाएगी।

13 सितम्बर, 1837 के पत्र में यह दर्ज किया गया कि एन०डब्ल्यू०एफ प्रान्त के उपराज्यपाल का विचार था कि यह समझौते की शर्तों के ज्यादा अनुरुप होगा कि यदि हरनायण सिंह के गांवों (12 महलों) का भत्ता राजस्व छूट के रुप में 22940/- रुपए के स्थान पर 17,130/- रुपए दिया जाए और जमींदारों (166 महलो) के साथ बसे गांवों में हरनारायण सिंह को तहसीलदारी शुल्क काटने के बाद राजस्व का 1/4 हिस्सा सालाना पेंशन का भुगतान किया जाएगा और उस आधार पर 30,612-8.0 रुपए हरनारायण सिंह को दिया जाये। एन०डब्ल्यू०एफ० प्रान्त के उपराज्यपाल के सचिव के पत्र दिनांक 19 अक्टूबर, 1837 के द्वारा राजस्व मण्डल के सचिव को यह सूचना दी गई कि उपराज्यपाल ने मण्डल के पत्र दिनांक 26 सितम्बर, 1837 के पत्र में की गई अनुशंषा को स्वीकार कर लिया है व हरनारायण सिंह को गांवों की सकल जमा राशि 1,28,960/- रुपए में से तहसीलदारी स्थापना के खर्चे रुपए 30,612-8-0 को काटकर 1/4 राशि की अनुमति दी गई। हरनारायण सिंह के साथ 12 महलों के किए गए समझौते के संबंध में आंकलन किए गए राजस्व के 1/4 हिस्स की छूट के रुप में भत्ते देने का निर्देश दिया गया। अन्त में, 14 सितम्बर, 1838 काे सदर राजस्व बोर्ड के सचिव द्वारा कार्यवाहक आयुक्त, 5वें डिवीजन, बनारस को लिखे गए पत्र में कहा गया कि

"सरकार जो देना चाहती थी, वह परगना के शुद्घ राजस्व का एक स्पष्ट चौथाई हिस्सा है मुकुर्ररिदार कों पेशन" के रुप मेंॅ देने बाबत लिखा गया।

"2. कुछ मौजों पर राजस्व की छूट के माध्यम से उस पेंशन के एक हिस्से का भुगतान करने की व्यवस्था जैसा कि माना जाता था, सीधे मुकुर्ररीदार के साथ बोर्ड द्वारा प्रस्तावित किया गया था और पार्टियों की सुविधा के लिए सरकार द्वारा अनुमति दी गई। न तो सरकार और न ही बोर्ड का इरादा मुकुर्ररिदार की पेंशन का कोई भी हिस्सा उसके बेटे या किसी अन्य व्यक्ति को देने का था।

3. यदि मौजों को मुकुर्ररिदार द्वारा अपने उपयोग और निमित्त के लिए बसाया जाना चाहिए और किसी अन्य व्यक्ति द्वारा विशिष्ट हित पर कब्जा कर लिया जाता है तो यह आवश्यक होगा कि बोर्ड पूर्व व्यवस्थाओं को संशोधित करे और दूसरों की भांति उन मौजाज के सकल राजस्व को एकत्र करे और एकत्र किए जाने पर मुकुर्ररिदार काे संग्रहण का एक चौथाई दिया जाएगा।

4. हालांकि, इन मौजो को सरकार द्वारा मुकुर्ररिदार के साथ निपटाया गया था, राजस्व का कोई भी हिस्सा जो व्यक्तिगत रूप से या उसके द्वारा की गई व्यवस्था, या उसके परिवार के घरेलू मतभेदों के

कारण बकाया हो सकता है कि भरपाई शुद्घ राजस्व के चौथे हिस्से को दिए जाने से पहले, उसकी पेंशन से भरपाई की जानी चाहिए।

5. बोर्ड को मुकुर्ररिदार को उसके जीनकाल तक इन गांवों का मालिक मानने पर विचार करना चाहिए। उनकी पारिवारिक व्यवस्था से उन्हें कोई सरोकार नहीं है, लेकिन यदि यह उसकी इच्छा होगी कि सभी गांवों से समस्त राजस्व एकत्रित करना चाहिए और एक चौथाई छूट के रुप में प्राप्त करने के बजाय उसे कोषागार से वापस मिलना चाहिए, उसे ऐसा चुनाव करने की स्वतंत्रता है।

6. बोर्ड की भी ऐसी टिप्पणी है कि मौजों को ऐरियर की दशा में विक्रय किए जाने अथवा अंतरित किए जाने की स्वतंत्रता है, परन्तु समझौते के अनुसार जमा की जिम्मेदारी पूर्ववत रहेगी।

यह स्पष्ट है कि राजस्व बोर्ड और सरकार के सचिव द्वारा लम्बे पत्राचार में की गई सिफारिशें समय-समय पर भिन्न होती हैं, लेकिन अंतिम पत्र में यह स्पष्ट किया गया है कि एक चौथाई के बराबर राशि 166 महलों का शुद्घ प्रतिफल जागीरदार को वार्षिक पेंशन के रुप में दिया जाए।

एक औपचारिक सनद, हालांकि विचार किया गया था, ऐसा प्रतीत होता है, कभी जारी नहीं किया गया था, लेकिन यह सामान्य आधार है कि

वर्ष 1838 से हरनारायण सिंह और उनके वंशजों को भत्ते का भुगतान गाजीपुर के कलक्टर के कोषागार कार्यालय के माध्यम से किया गया था। "स्यूदपोर भैट्री" के जागीरदार को दिए जाने वाले इस भत्ते को राजस्व पत्रों में कभी "मलिकाना" तो कभी "पेंशन" और कभी-कभी "पूरे परगना के राजस्व में हिस्सा" कहा जाता था।

1951 में, यू.पी. विधानमंडल ने उत्तरप्रदेश जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार अधिनियम 1 ऑफ 1951 अधिनियमित किया और अधिनियम की धारा 6(ख) के तहत राजस्व अधिकारियों ने हरनारायण सिंह के वंशजों को भत्ते का भुगतान रोक दिया। प्रतिवादी, जो हरनारायण सिंह का वंशज है, ने रिट याचिका नं० 464 ऑफ 1954 मैण्डुमस के रुप में इलाहाबाद उच्च न्यायालय में प्रस्तुत की, जिसमें उत्तरप्रदेश राज्य को"स्यूदपोर भैट्री" परगना के संबंध में हरनारायण सिंह की पैतृक सम्पत्ति के संबंध में पेंशन, भत्ता या मालिकाना के नियमित भुगतान में हस्तक्षेप न करने व बकाया पेंशन, भत्ता या मालिकाना का भुगतान किए जाने का आदेश दिए जाने का अनुरोध किया गया। प्रत्यर्थी ने अन्य बातों के साथ-साथ दावा किया कि अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत जारी की गई अधिसूचना के अनुसार उसका पेंशन प्राप्त करने का अधिकार समाप्त नहीं हुआ है, विशेषतः उस दशा में जबकि अधिनियम की योजना व अ◌ा◌ंकलन के सिंद्घात ऐसा

प्रावधित नहीं करते हैं जो भत्ताें के संबंध में प्राप्त अधिकारों की समाप्ति की ऐवज में मुआवजा और कि ऐसी दशा में जहां पेंशन व 1951 के अधिनियम 1 के अंतर्गत अवाप्त की गई सम्पत्ति या जमींदारी व्यवस्था को समाप्त करने का कोई संबंध नहीं है, क्योंकि पेंशन न तो भूमि है, न अचल समपत्ति है और न ही अधिनियम में दी गई सम्पत्ति की परिभाषा में है और केवल "स्यूदपोर भैट्री" परगना में स्थित सम्पत्ति पर उसके पूर्वजों के अधिकारों के बदले में दिया गया मुआवजा है, यह सरकार में निहित किए जाने योग्य नहीं है। उच्च न्यायालय में रिट याचिका की पोषणीयता के संबंध में प्रारंभिक आपत्ति को खारिज कर दिया (जिन आपत्तियों काे इस अपील में प्रचार नहीं किया गया है) और यह अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थीगण का 36,330/- रुपए प्राप्त करने का अधिकार अधिनियम में दी गई सम्पदा की परिभाषा मेे नही आता है और कि किसी अधिनियम के अंतर्गत अधिकार प्राप्त नहीं किया गया और उन्हें उसके बदले में दिया गया मुआवजा है। उच्च न्यायालय के विचार में अधिनियम की धारा 6 के अंतर्गत संपत्ति में शामिल भूमि के भू-राजस्व के संबंध में केवल मध्यस्थों के अधिकार समाप्त कर दिए गए थे और राज्य के साथ एक अनुबंध के तहत तीसरे पक्ष के अधिकार, जो मध्यस्थों के अधिकारों और विशेषाधिकारों से संबंधित नहीं थे, भूमि में रुचि रखने वाले किरायेदारों या अन्य व्यक्तियों पर प्रभाव नहीं पडा, और प्रतिवादी के हित में पूर्ववर्तियों

का भू-राजस्व की वसूली के अधिकार के परित्याग के बदले में वार्षिक भत्ता दिया गया, यह व्यवस्था क्योंकि अधिनियम के तहत "जमींदारी के उन्मूलन" के कारण समाप्त नहीं हुई थी।

इस अपील में उत्तरप्रदेश राज्य के द्वारा जो प्रश्न निर्णीत किये जाने योग्य है वह यह है कि क्या प्रत्यर्थीगण का 1838 के समझौते के अंतर्गत भत्ता प्राप्त करने का अधिकार "स्यूदपोर भैट्री" परगना अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत उत्तरप्रदेश राज्य में निहित हो जाने के परिणामस्वरुप समाप्त हो गया था।

प्रस्तावना द्वारा यह पढ़ा गया कि अधिनियम जमींदारी व्यवस्था काे समाप्त करने के लिए अधिनियमित किया गया था, जिसमें भूमि जोतने वाले और राज्य के बीच मध्यस्थ सम्मिलित हैं और उनके अधिकारों, शीर्षक और हितों के अधिग्रहण के लिए और ऐसे उन्मूलन और अधिग्रहण के परिणामस्वरुप भूमि कार्यकाल से संबंधित कानून को तैयार करने और इससे जुडे अन्य मामलों के लिए प्रावधान करने के लिए शामिल किया गया था। 1958 के अधिनियम 14 की धारा 3(8) के द्वारा जिसे पूर्वव्यापी रूप से संशोधित किया गया था, "संपत्ति" को उपखण्ड (ए) से (डी) में वर्णित किसी भी रजिस्टर में एक प्रविष्टि के तहत शामिल क्षेत्र के रुप में परिभाषित किया गया था और जहां तक यू०पी० भू-राजस्व

अधिनियम 1901 की धारा 32 के उपखण्ड (इ) में वर्णित अथवा किसी अन्य अधिनियम, नियम, नियमावली या अधिकारों संबंधी रिकार्ड की तैयारी या रखरखाव से संबंधित आदेश जो उस समय प्रभावी थे और जिसमें हिस्सा या सम्पदा शामिल थी । "मध्यस्थ" का अर्थ किसी भी सम्पदा, मालिक, मालिक के अधीन, उप मालिक, ठेकेदार, अवध में स्थाई पट्टेदारों और ऐसी सम्पत्ति के स्थाई किरायेदार धारक के संदर्भ में परिभाषित किया गया था। भूमि की परिभाषा धारा 143 व 144 जैसा कि "भूमि" को कृषि, बागवानी या पशुपालन से जुडे उद्देश्यों के लिए भूमि पर कब्जा या कब्जा किया गया है, जिसमें मछली पालन और मुर्गी पालन शामिल है, के अर्थ के रुप में परिभाषित किया गया था। धारा 4 के द्वारा सम्पदा को उत्तरप्रदेश राज्य में निहित करने का प्रावधान किया गया। उप धारा (1) द्वारा, यह अधिनियमित किया गया था, जहां तक महत्वपूर्ण है कि राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा घोषणा करें कि निर्दिष्ट की जाने वाली तिथि से, उत्तर प्रदेश में स्थित सभी सम्पत्ति राज्य में निहित होंगी और इस प्रकार निर्दिष्ट तिथि से, ऐसी सभी सम्पदाएं अधिनियम में दिए गए अपवादों को छोड़कर, राज्य में सभी भार से मुक्त हस्तांतरित और निहित होंगी। धारा 6 में राज्य में निहित सम्पदा के परिणामों के बारे में प्रावधान करती है। धारा 4 के तहत, किसी भी अनुबंध या दस्तावेज या उस समय लागू किसी अन्य कानून में निहित किसी भी बात के होते हुए एवं जिसे

अन्यथा अधिनियम में सुरक्षा किया गया है, धार 6 के उपखण्ड (ए) से (जे) में जो परिणाम बताये गए हैं वे अधिसूचना से संबंधी क्षेत्र में सम्मिलित हा ेंगे। उपखण्ड (ए) द्वारा, ऐसे क्षेत्र में प्रत्येक सम्पत्ति में मध्यस्थों के सभी अधिकार, शीर्षक और हित और ऐसी सम्पत्ति में उप मिट्टी में खानों और खनिजों में अधिकार, यदि कोई हो, सहित समाप्त हो गए और राज्य में निहित हो गए। उपखंड (बी) जिस पर मुख्यतय विवाद है यह प्रावधान करता हैः

> "ऐसी भूमि के संबंध में सभी अनुदान, स्वामित्व की पुष्टि या प्राप्त की गई सम्पदा की भूमि या अन्य कोई भी अधिकार या विशेषाधिकार क्या पुनः जीवित करने योग्य हैं या विनिश्चयकरण।"

उपखण्ड(सी) के द्वारा, किसी सम्पदा या भूमि के निहित होने के पश्चात् किसी अवधि के लिए सभी किराया, स्थानीय दर एवं सयार एवं राज्य सरकार को देय होगा न कि मध्यस्थ को एवं जहां किसी किराया, अधिभार, स्थानीय दर और सयार के निहित होने से पूर्व किसी संविदा या अनुबंध के अधीन किसी भी अवधि के लिए उस तिथि के बाद मध्यस्थ के द्वारा जो देय किया जा चुका था या जिसे शामिल कर लिया गया था या दे दिया गया था, वह संविदा या अनुबंध के होने के बावजूद राज्य सरकार

द्वारा मध्यस्थ से वसूली योग्य होगा। उपखण्ड (डी) और (इ) के द्वारा हित निहित होने से पूर्व ऐसी किसी भी सम्पत्ति के संबंध में मध्यस्थ की जिम्मेदारी यथावत प्रभावी रहेगी। उपखण्ड (एफ) के द्वारा, किसी भी सम्पदा में मध्यस्थाें के हित को किसी भी डिक्री की पालना या अन्य न्यायालय की कार्यवाही में कुर्क किए जाने या विक्रय किए जाने से मुक्त होंगे एवं हित निहित होने की तिथि के समय या ऐसी तिथि से पूर्व कुर्क किए जाने के आदेश, सम्पत्ति अंतरण अधिनियम 1882 की धारा 73 के अधीन, प्रभावी नहीं होंगे। उपखण्ड (जी) के द्वारा, किसी सम्पदा या उसके किसी भाग पर हित निहित होने की तिथि से तुरन्त पूर्व कब्जा सहित रहन के स्थान पर राज्य सरकार के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना साधारण रहन होगा। उपखण्ड (एच) के द्वारा, सम्पत्ति या उसके हिस्से के बंधक पर लगाए गए या सुरक्षित किए गए किसी भी धन के लिए किसी मध्यस्थ द्वारा या उसके खिलाफ निहित होने की तारीख से पहले कोई दावा या दायित्व लागू या खर्च नहीं किया गया था, सिवाय इसके कि सम्पत्ति हस्तांतरण अधिनियम के धारा 73 में प्रदान किया गया हो, सम्पत्ति में उसके हित के विरुद्घ प्रवर्तनीय। उपखण्ड (आई) के द्वारा, हित निहित होने की तिथि को एवं डिक्री पारित हाेने तक की कार्यवाही या ऐसे किसी दावे में पारित किए गए आदेश या हित निहित होने की तिथि से कार्यवाही को स्थगित किया गया था। उपखण्ड (जे) के द्वारा, हित निहित

होने की तिथि से तुरन्त पूर्व सभी महलों एवं उनके उपखण्ड एवं भू-राजस्व अदा करने की सभी व्यवस्थाएं या सम्पत्तिधारक के द्वारा किराया, स्वामी के अधीन, उप स्वामी, हिस्सेदार या लम्बरदार, जैसा कि निर्णीत किया गया है एवं प्रभाव नहीं रखेंगे।

अधिनियम की धारा 37 से 40 में महलों के संबंध में मध्यस्थों के मुआवजा मूल्यांकन तालिका की तैयारी और महलों की सकल सम्पत्ति की तैयारी के लिए प्रावधान किया गया है। इस मुआवजा आंकलन तालिका के आधार पर मध्यस्थ को कारित हुए ब्याज की हानि की देय क्षतिपूर्ति की गणना की जानी चाहिए एवं अदा करनी थी। धारा 42 में एक मध्यस्थ और सकल सम्पत्ति की गणना के लिए प्रावधान किया गया है। धारा 44 किसी मध्यस्थ की शुद्घ परिसम्पत्तियों की गणना के लिए। धारा 45 के प्रावधान अनुसार उन सम्पत्तिधारकों जिन पर उत्तर प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम, 1901 की धारा 78 लागू की गई थी या जो भू-राजस्व के सम्पत्ति भागीदार थे जिनके नाम अधिनियम की धारा 32 के उपखण्ड (ए) से (डी) के अंतर्गत पोषित रिकार्ड में दर्ज थे जिनमें अवध के उप-मालिकों, स्थाई किरायेदारों और पट्टेदारों शामिल थे, धारा 39 से 44 के प्रावधान इस तरह के ऐसे आकस्मिक परिवर्तनाें और संशोधनों, जैसा विहित

किया गया है, के अधीन लागू किये जाने थे एवं सकल व शुद्घ सम्पत्तियों की उसी अनुरुप गणना की जानी थी।

अधिनियम की धारा 3(8) में दी गई परिभाषा के अनुसार सम्पदा भू-राजस्व अधिनियम के उपखण्ड (ए) से (डी) मे वर्णित रजिस्टरों में की गई प्रविष्टि के अंतर्गत आने वाला क्षेत्र है। उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थीगण के इस तर्क को सही माना कि उसे दिए जाने वाले भत्ते सम्पदा नहीं माना था। इस न्यायालय के समक्ष उक्त विचार को हमारे सामने उत्तरप्रदेश राज्य के अधिवक्ता के द्वारा चुनौती नहीं दी गई है। व्यवस्था के अंतर्गत राज्य सरकार से 30,612-8-0 राशि के भत्ते को प्राप्त करने के अधिकार को, इस आशय के प्रावधान की अनुपस्थिति में, वह क्षेत्र नहीं कहा जा सकता जो विभिन्न उपखण्डों में वर्णित रजिस्टरों में की गई प्रविष्टियों में शामिल है। धारा 6(बी) का प्रथम भाग राज्य के दावे की कोई सहायता नहीं करता है।

लेकिन 12 महलों में से प्रतिवादी एक मालिक थाः महलों की भूमि अधिनियम की धारा 3(8) के अर्थ में "सम्पदा" थी और धारा 4 द्वारा उस सम्पत्ति पर प्रतिवादी का अधिकार राज्य में निहित और स्थानांतरित हाे गया। यह सच है कि वर्ष 1838 की व्यवस्था द्वारा, पहले के समझौते की पुष्टि करते हुए, प्रतिवादी के पूर्वजों को भू-राजस्व के भुगतान के संबंध में 25 प्रतिशत की छूट दी गई थी। यदि 12 महलों में

प्रतिवादी का अधिकार समाप्त हा े जाता है, तो छूट का अधिकार उसकी राशि प्राप्त करने के सकारात्मक अधिकार में परिवर्तित नहीं किया जा सकता है, भले ही उन 12 महलों में उसका अधिकार समाप्त हा े जाए। भूमि की माफी का अधिकार राजस्व सम्पत्ति में भूमि राजस्व के संबंध में एक अधिकार था जो राज्य में निहित था। 13 सितम्बर, 1837, 19 अक्टूबर 1837 और 15 जून 1838 के पत्रों से यह स्पष्ट होता है कि राशि के बीच 5710/- रुपए का अंतर था मूलरुप से मूल्यांकन किया गया था और जमा वसूली योग्य राजस्व की छूट थी। 12 महलों के प्रतिवादी का अधिकार धारा 4 के तहत अधिसूचना के आधार पर राज्य को हस्तांतरित कर दिया गया था और उप धारा (बी) और धारा 6 में उन 12 महलों से संबंधित परिणाम निर्धारित किए गए थे।

इसलिए हम उच्च न्यायालय के इस मत से सहमत होने में असमर्थ हैं कि जो 6710/- रुपए की राशि छूट के रुप में मानी गई थी, प्रत्यर्थी इस आधार पर अनुतोष प्राप्त करने का अधिकारी था कि अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत जारी की गई अधिसूचना से उसका अधिकार प्रभावित नहीं होता था।

166 महलों के अधिकार को त्यागने के प्रतिफल के रुप में दिए गए भत्ते के संबंध में प्रतिवादी का दावा मजबूत आधार पर आधारित है। यह

सच है कि इस भत्ते की गणना 166 महलों पर निर्धारित राजस्व के 1/4 वें हिस्से के रुप में की गई थी। लेकिन व्यवस्था के तहत प्रतिवादी को 166 महलों की भूमि या उसके संबंध में देय भू-राजस्व में कोई दिलचस्पी नहीं है। सरकार के आदेश से श्योनारायण सिंह का सम्पूर्ण परगना "स्यूदपोर भैट्री" पर अधिकार पुनः प्राप्त कर लिया गया। श्योनारायण सिंह ने जागीर में अपना हित फिर से शुरु करने के लिए सरकार के अधिकार को चुनौती दी और दीवानी न्यायालय में लंबित विवाद को उन शर्तों पर समझौता कर लिया गया, जिन्हें वर्ष 1838 में अंतिम रुप दिया गया था, जिसके तहत हरनारायण सिंह और उनके वंशजों को समान राशि का भत्ता 166 महलों के शुद्घ राजस्व का 1/4 वां हिस्सा दिया गया था। क्योंकि वार्षिक भत्ता महलों के शुद्घ राजस्व के एक चौथाई हिस्से के बराबर है, प्रतिवादी का अधिकार भूमि या भू-राजस्व में हित के चरित्र का अधिग्रहण नहीं करता है। व्यवस्था के तहत, सम्पूर्ण भू-राजस्व सरकार द्वारा एकत्र किया जाना था और संग्रह में हरनारायण सिंह और उनके वंशजों का कोई हित या दायित्व नहीं था। भूमि और उसके राजस्व का अधिकार छोडने के प्रतिफल के रुप में, प्रतिवादी और उसके पूर्वजों को 30,612-13-0 रुपए का भत्ता दिया गया था। भत्ता एक अर्थ में भूमि पर निर्धारित भू-राजस्व से संबंधित था, अर्थात, यह भू-राजस्व के प्रतिशत के रूप में निर्धारित किया गया था, लेकिन प्रतिशत केवल एक उपाय था, और उस अधिकार के स्रोत को इंगित करता

था जिसके बदले में भत्ता दिया गया था। 14 सितंबर, 1838, 7 जुलाई, 1837 और 15 जून, 1838 के पत्रों में इस राशि को "पेंशन" के रूप में वर्णित किया गया है। उपखण्ड (बी) में प्रयुक्त किए गए शब्द निस्संदेह विस्तृत हैं; अनुदान का कोई अधिकार जिसका भूमि या भू-राजस्व से संबंध है, उस उपखण्ड के अनुसार द्वारा निर्धारित किया जाएगा। लेकिन हरनारायण सिंह को भत्ता, भूमि या उसके राजस्व के संबंध में नहीं थाः यह उस भूमि से संबंधित एक नागरिक न्यायालय में मुकदमें के निपटारे के लिए प्रतिफल के रुप में दिया गया था।

विधायिका का प्राथमिक उद्देश्य, जैसा कि अधिनियम की प्रस्तावना में लिखा गया है, जमींदारी प्रथा को समाप्त करना और बिचौलियों के अधिकारों को प्राप्त करना और उन अधिकारों के अधिग्रहण के लिए मुआवजा देना था। धारा 4 द्वारा, जिस क्षेत्र के लिए एक अधिसूचना जारी की गई थी, उस क्षेत्र की सम्पत्तियां सभी अधिभारों से मुक्त होकर राज्य में निहित हो जाती हैं और निहित होने के परिणामस्वरुप, मध्यस्थों के अधिकार, उनकी पूर्व मौजूदा देनदारियां हित निहित होने की तिथि से समाप्त नहीं होती हैं। उपखण्ड (ए), (सी), (एफ) और (एच) स्पष्ट रुप से मध्यस्थों के अधिकारों और दायित्वों और हित निहित हाेने की अधिसूचना की बातचीत से संबंधित है। उपखण्ड (जी) सम्पदा के रहनदारों

द्वारा प्राप्त किए गए अधिकारों से संबंधित है। उपखण्ड (आई) द्वारा महल और उप विभाजन समाप्त हाे जाते हैं, और स्वामी, उप स्वामी, सह हिस्सेदारों और उप हिस्सेदारों द्वारा भूमि राजस्व या किराये के भुगतान की प्रतिबद्घता समाप्त हो जाती है। धारा 6(बी) में मध्यस्थों के अधिकाराें के संबंध में कोई संदर्भ नहीं है और उपखण्ड के प्रथम भाग के द्वारा अनुदान और स्वामित्व की पुष्टि का निर्धारण किया जाता है एवं दूसरे भाग के द्वारा भूमि में या सम्पदा में भू-राजस्व के अधिकारों विशेषाधिकार का निर्धारण किया जाता है। खंड के दूसरे भाग में मुख्य शब्द "के संबंध में" हैं जो किसी सम्पदा में या उसके राजस्व में अधिकार व विशेषाधिकार के बीच में संबंध स्थापित करता है। विधायिका का इरादा स्पष्ट रूप से सम्पदा और सम्पदा में सभी व्युत्पन्न अधिकारों को समाप्त करना और राज्य और भूमि जोतने वाले के बीच मध्यस्थों के हितों काे समाप्त करने का है। यदि स्वामित्व का अनुदान या पुष्टि किसी सम्पत्ति या उसके राजस्व में भूमि के अधिकार या विशेषाधिकार के संबंध में है, तो इसे उपखण्ड(बी) के तहत निर्धारित किया जाना चाहिए; परन्तु भत्ता प्राप्त करने का अधिकार जो भूमि अथवा भू-राजस्व के संबंध में दिए गए अधिकार की समाप्ति की ऐवज में दिया गया है उपखण्ड (बी) के प्रभाव से निर्णीत नहीं होता है। भत्ते में भूमि या भू-राजस्व के गुण नहीं हैः इसकी मात्रा को केवल भूमि के एक हिस्से के शुद्घ राजस्व में एक चौथाई हिस्से

के बराबर करके मापा गया था जो उस मुकदमे का विषय था जिसमें भत्ते के भुगतान की व्यवस्था की गई थी।

प्रत्यर्थीगण के द्वारा जो मुआवजा की अदायगी के अधिकार को लेकर दावा किया गया है जिसके संबंध में अधिनियम में कोई प्रावधान नहीं है, इस तर्क को समर्थित करता है कि उक्त अधिकार को अवाप्त करने या समाप्त करने का आशय नहीं था। धारा 37 से 44 मध्यस्थों को भुगतान किए जाने वाले मुआवजे के आंकलन से संबंधित है। महलों के संबंध में मध्यस्थों का मुआवजा मूल्यांकन रोल तैयार किया जाना है और इस संबध में विस्तृत निर्देश धाराएं 39 से 44 में शामिल है। धारा 45 द्वारा, उन मालिकों की सकल सम्पत्ति और शुद्घ सम्पत्ति की गणना करने में, जो भू-राजस्व के सम्पत्ति भागी हैं और अवध में अण्डर-प्रोपराइटर, उप स्वामी, स्थाई किरायेदार धारक और स्थाई पट्टेदार हैं अधिनियम की धाराएं 39 से 44 ऐसे संशोधनों और आकस्मिक परिवर्तनों के अधीन लागू होते हैं। यह सामान्य बात है कि उत्तरप्रदेश भू-राजस्व अधिनियम की धारा 78 "स्यूदपोर भैट्री" परगना पर लागू नहीं होती है। उन मालिकों के लिए जो भू-राजस्व के सम्पत्ति भागी हैं और जिनके नाम धारा 32 के उपखण्ड (ए) से (डी) के तहत राजस्व रिकार्ड में बनाए गए में दर्ज हैं। धाराएं 39 से 44 के प्रावधान निःसंदेह संशोधनों के अधीन लागू हो सकते हैं जैसा कि

निर्धारित किया जा सकता है, और उनकी सकल और शुद्घ सम्पत्ति की गणना तदनुसार की जा सकती है। लेकिन प्रतिवादी भू-राजस्व का सम्पत्ति भागी नहीं है जिसका नाम राजस्व रिकार्ड में दर्ज है और न ही वह किसी अण्डर प्रोपराईटर, उप-मालिक, स्थाई किरायेदार-धारक या स्थाई पट्टेदार को भत्ता देने का हकदार है। धारा 45 एक मशीनरी प्रावधान है: इसका तात्पर्य उन परिणामों को निर्धारित करके धारा 6 के क्षेत्र का विस्तार करना नहीं है जो उस धारा में शामिल नहीं है। धारा 45 में ऐसा नहीं है जो राज्य के अधिवक्ता को यह तर्क प्रस्तुत करने के लिए आमंत्रित करता हो कि एक भूमिधारक के राज्य सरकार के भत्ता प्राप्त करने के अधिकार समाप्त हो गए हों, यहां तक बिना मुआवजे के मात्र इस आधार पर कि वह अवध में अन्य भूमि के भू-राजस्व का सम्पत्ति भागी अथवा स्वामी, सह स्वामी, स्थाई किरायेदार-धारक या स्थाई पट्टेदार हो। अवध में मुआवजे के भुगतान की योजना निर्धारित की गई है। धाराएं 39 से 44 अन्य लोगों के अलावा, भूमि के मालिकों तक विस्तारित है, जो भू-राजस्व के सम्पत्ति भागी है, जिनके नाम धारा 32 के उपखण्ड (ए) से (डी) के तहत बनाए गए राजस्व रिकार्ड में दर्ज है। लेकिन एक व्यक्ति जो राज्य सरकार से प्रत्यर्थी से प्राप्त अधिकारों के अंतर्गत भत्ता प्राप्त कर रहा है वह भू-स्वामी नहीं है, भू-राजस्व का सम्पत्ति भागी है एवं किसी भी दशा में यदि उसका नाम धारा 32 के (ए) से (डी) के अंतर्गत राजस्व रिकार्ड में दर्ज नहीं किया गया

है, सकल एवं शुद्घ सम्पदा की गणना करने संबंधी प्रावधान उस पर लागू नहीं होंगे। प्रत्यर्थी की भांति ऐसा व्यक्ति जिसका हित निहित हो को मुआवजा देने संबंधी प्रावधान अधिनियम मेें नहीं होना इस विचार को मजबूती से समर्थित करता है कि ऐसा हित 1951 के अधिनियम 1 की धारा 6(बी) के द्वारा समाप्त नहीं होता है।

हम तदनुसार यह निर्णीत करते हैं कि उच्च न्यायालय प्रत्यर्थी के द्वारा प्रस्तुत किए गए प्रार्थना पत्र को स्वीकार करने में सही था जो हरनारायण सिंह को 166 महलों के अधिकारों की समाप्ति के ऐवज में राशि 30,612-13-0 के भत्ते से संबंधित था, परन्तु ऊपर वर्णित कारणों के आधार पर हम उच्च न्यायालय से सहमत हाेने में असमर्थ है कि प्रत्यर्थी 12 महलों का भू-राजस्व, जिसकी छूट दी गई थी, को प्राप्त करने का अधिकारी था। अतः उच्च न्यायालय के द्वारा पारित किया गया आदेश संशोधित किया जाता है एवं प्रत्यर्थीगण की याचिका जो "स्यूदपोर भैट्री" के 12 महलों के भू-राजस्व की छूट से संबंधित थी, खारिज की जाती है। उच्च न्यायालय का 30,612-13-0 रुपए के भत्ते के संबंध में पारित किए गए आदेश की पुष्टि की जाती है। उक्त संशोधन के अधीन अपील खर्चा सहित खारिज की जाती है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी भारतभूषण गुप्ता (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।